अनुबोधन, खण्ड 2, अंक 1, मार्च 2026, पृष्ठ 351–366
ISSN: 3049-4184 (प्रिन्ट), 3108-1185 (ऑनलाइन)
https://doi.org/10.65885/anubodhan.v2n1.2026.034

मध्य गंगा मैदान का कला वैभव एवं पुरातत्त्व (नवीन सर्वेक्षण के आलोक में)

डॉ0 संजय कुमार कुशवाहा*

प्राप्तिः 21 मार्च 2026 / स्वीकृतः 29 मार्च 2026 / प्रकाशितः 31 मार्च 2026
जर्नल वेबसाइटः https://anubodhan.org

मध्य गंगा मैदान का प्राचीन काल से ही मानव को उपलब्ध संसाधनों से अपनी ओर आकर्षित करता रहा है, वर्तमान समय में इनके अवशेष टीले एवं खंडहर के रूप में प्राप्त होते हैं। प्रस्तुत लेख में ऐसे ही पुरास्थलों से प्राप्त कलात्मक पुरावशेषों को आधार बनाकर क्षेत्र विशेष की ऐतिहासिक विरासत और कला वैभव को उद्घाटित करने का प्रयास किया गया है। मध्य गंगा मैदान में स्थित पुरास्थल प्रहलादपुर कोट, जिसका उत्खनन काशी हिंदू विश्वविद्यालय के प्राचीन इतिहास विभाग के प्रोफेसर ए. के. नारायण के निर्देशन में टी. एन. राय एवं बी. पी. सिंह के द्वारा 1963 ईस्वी में करवाया गया था। इस पुरास्थल का इतिहास लगभग प्रथम शताब्दी ईसा पूर्व में समाप्त हो जाता है इसके आगे के इतिहास की जानकारी हेतु प्रहलादपुर पुरास्थल के 5 किलो की परिधि में सर्वेक्षण का कार्य किया गया। परिणामस्वरूप तीन पुरास्थल, प्रहलादपुर शिवाला, मन्नी पट्टी चट्टी और करजरा कोट प्रकाश मे आये। इन पुरास्थलों से बहुत से पुरावशेष प्राप्त हुए, जिसमें मंदिर स्थापत्य, मूर्तियॉ, टेराकोटा की बनी कलाकृतियॉ, मृदभाण्ड, मनके, खेल–खिलौने इत्यादि की प्राप्ति हुई है जो मध्य गंगा मैदान के कला वैभव को बढाने के साथ–साथ पुरातात्विक एवं सास्कृतिक इतिहास में नवीन अध्याय जोडने का काम करेगें। प्रहलादपुर शिवाला में एक मंदिर का अवशेष है जिसके द्वार के ऊपर 10 पंक्तियों के लेख की भी प्राप्ति हुई है, जिसमें मूल स्थान का नाम, सन् एवं बनारस के नाम का उल्लेख है, जो इस पुरास्थल एवं क्षेत्रीय इतिहास की महत्ता को ऐतिहासिक विरासत की पटल पर स्थापित करेगा।

सर्वेक्षण के द्वारा अप्रकाशित एवं दबे पड़े पुरावशेषों को उद्घाटित करने का कार्य किया जाता है। मेरे द्वारा मध्य गंगा मैदान में स्थित चन्दौली जिले की सकलडीहा और चन्दौली तहसील में सर्वेक्षण का कार्य किया गया है। यह सर्वेक्षण मुख्यतः चन्दौली जिले

*असिस्टेंट प्रोफेसर, प्राचीन इतिहास, संस्कृति एवं पुरातत्त्व विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, प्रयागराज, ई-मेल: skkushavaha@allduniv.ac.in

का गंगा नदी से लगे भू–भाग का है। इस क्षेत्र में सर्वेक्षण के पीछे मेरा उद्देश्य प्रहलादपुर पुरास्थल के आस–पास और पुरास्थलों को खोजना एवं प्रहलादपुर पुरास्थल का इतिहास प्रथम शताब्दी ईसा पूर्व के लगभग समाप्त हो जाता है क्यो? और यहाँ पर निवास करने वाला मानव स्थानान्तरित होकर कहाँ चला जाता है? इस जिले में गंगा नदी से लगभग 3 कि0मी0 की दूरी पर स्थित एक और पुरास्थल बैराठ है जहाँ पर अलेकजेंडर कनिंघम द्वारा सीमित पैमाने पर उत्खनन करवाया गया और इसे दुगीकृत पुरास्थल घोषित किया। यह पुरास्थल सकलडीहा तहसील में स्थित है। इन दोनों पुरास्थलों को आधार बनाकर सर्वेक्षण का कार्य किया गया है।

इस जिले में इससे पूर्व भी सर्वेक्षण किया गया है जिसमें प्रथम नाम अलेक्जेंडर कनिंघम का आता है इनके द्वारा सर्वप्रथम 1875–76 में सर्वेक्षण का कार्य किया गया था (कनिंघम 1880)। 1877–80 में अलेक्जेण्डर कनिंघम के निर्देशन में ए0सी0एल कर्लाइल द्वारा सर्वेक्षण कार्य किया गया और बैराठ पुरास्थल को उत्खनित कर दुर्गीकृत शहर के रूप में चिन्हित किया गया (कार्लाइल, 1885) इसी क्रम में 1891 ई0 में फूहरर द्वारा सर्वेक्षण का कार्य किया गया और एक नवीन पुरास्थल प्रहलादपुर को सर्वप्रथम सर्वेक्षित किया गया (फुहरर; 1891:234)। इस कार्य के लगभग 60 साल के लम्बे अन्तराल के बाद काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण विभाग एवं उत्तर प्रदेश राज्य पुरातत्व विभाग द्वारा 1957 से लेकर आज तक इस जिले में सर्वेक्षण एवं उत्खनन किया जा रहा है। इस जिलों में प्रथम व्यवस्थित उत्खनन का कार्य सन 1963–64 ईस्वी में काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के प्राचीन भारतीय इतिहास संस्कृति एवं पुरातत्व विभाग के ए0के0 नारायण और टी0एन0 राय द्वारा प्रह्लादपुर पुरास्थल का करवाया गया और जिले का इतिहास प्राक् उत्तरी काली चमकीली मृदभाण्ड परमपरा तक हो गया (नारायण एवं राय, 1968:5–7)। सन् 1962 ईस्वी में इलाहाबाद विश्वविद्यालय के जी0आर0 शर्मा द्वारा ककोरिया नामक महापाषाणिक पुरास्थल का उत्खनन करवाया गया हॅालाकि यह पुरास्थल चन्दौली जिले के पहाड़ी क्षेत्र में स्थित है (पाल, 1986: 1–50)। इस क्षेत्र में और भी पुरास्थल है जिनका उत्खनन कार्य किया गया जिसमें मल्हार, हेतिमपुर और तकियापार है तथा वर्तमान समय में काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के प्राचीन भारतीय इतिहास संस्कृति एवं पुरातत्व विभाग के प्रभाकर उपाध्याय द्वारा 'मूसाखाड़' नामक पुरास्थल का उत्खनन कार्य करवाया जा रहा है। मल्हर पुरास्थल का उत्खान कार्य सन् 1997–98 ई0 में उत्तर प्रदेश राज्य पुरातत्व सर्वेक्षण विभाग के द्वारा करवाया गया जहां से ताँवे एवं लोहे के भण्डार का प्रमाण मिला है (तिवारी, 1997–98 : 57–67)। इन कार्यो के बाद सन् 1999– 2000 ईस्वी में काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के प्राचीन भारतीय इतिहास संस्कृति एवं पुरातत्व विभाग के पुरूषोत्तम सिंसह राकेश तिवारी और आर.एन. सिंह द्वारा सर्वेक्षण का कार्य किया गया और कुल 24 पुरास्थलों को चिन्हित किया गया। (सिंह एवं अन्य 1999–2000: 137–148) अभी हाल ही में डा0 ओम प्रकाश भारती द्वारा भी चन्दौली जिले के पुरातत्व पर शोध कार्य किया गया जिसमें उनके द्वारा 120 पुरास्थलों को सर्वेक्षित किया गया है।

यदि इन सभी कार्यो को देखा जाय तो ये सभी कार्य चन्दौली जिले के पहाड़ी एवं उनके समीपवर्ती क्षेत्रों में किये गये है जो कर्मनाशा और चन्द्रप्रभा नदी द्वारा सिंचित क्षेत्र है। गंगा नदी के समीपवर्ती क्षेत्र में ए.के नारायण एवं टी0एन0 राय के द्वारा

प्रह्लादपुर पुरास्थल पर किया गया कार्य महत्वपूर्ण है। यहॉ से प्राप्त कलात्मक एवं पुरातात्विक अवशेषों का संक्षिप्त विवरण निम्नवत् है –

प्रह्लादपुर– (25^0 26′ 24″ उत्तरी अक्षांस, 83^0 27′ 17″ पूर्वी देशान्तर)

प्रह्लादपुर पुरास्थल उत्तरप्रदेश के चन्दौली जिले के चन्दौली तहसील मे वाराणसी से 60 कि0मी0, चन्दौली जिला मुख्यालय से 30 किमी0 तथा धानापुर थाना से 12 कि0मी0 की दूरी पर स्थिति है (मानचित्र 3)। यह पुरास्थल गंगा नदी के दाये किनारे पर स्थित है (चित्र संख्या 70)। इस पुरास्थल का सर्वेक्षण एवं उत्खनन कार्य प्राचीन भारतीय इतिहास संस्कृति एवं पुरातत्व विभाग काशी हिन्दू विश्वविद्यालय ए0के0 नरायण के निर्देशन में टी0एन0 राय एवं बी0पी0. सिंह द्वारा 1963 ई0 में करवाया गया।

चित्र संख्या 70: 1963 में पुरास्थल का विहंगम दृश्य

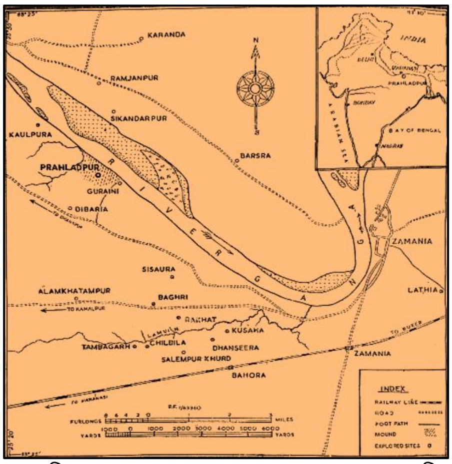

मानचित्र 3 प्रहलादपुर पुरास्थल का मानचित्र

प्रह्लादपुर पुरास्थल का विस्तार क्षेत्र लगभग 500 X 500 मीटर के वृहद क्षेत्र में है। प्रहलादपुर के मुख्य अधिवास को 30 मीटर चौड़ा नाला दो भागों में विभक्त करना हुआ गंगा नदी में गिरता है। टीले के उत्तर पश्चिम भाग को टीला संख्या–1 (चित्र संख्या 71) तथा टीले के दक्षिण–पश्चिम भाग को टीला संख्या–2 की संज्ञा दी गयी है। टीला संख्या–1 को प्रहलादपुर कोट के नाम से जाना जाता है तथा टीला संख्या–2 के पूर्व की तरफ नदी के किनारे भगवान विष्णु और 'नरसिंह अवतार' की स्तुति में एक मन्दिर का निर्माण प्रहलाद के स्मारक के रूप में की गई है जिसे भगवान नरसिंह द्वारा उसके निर्दयी पिता हिरण्यकश्यप के शिकन्जे से बचाने के उपलक्ष्य में निर्मित करवाया गया है (नरायण एवं राय, 1968ः 5–7)। टीला संख्या–1 की ऊँचाई भूमि तल से 9 मीटर थी (चित्र संख्या 72) लेकिन वर्तमान समय में टीले की ऊँचाई 5 मीटर के लगभग रह गयी है।

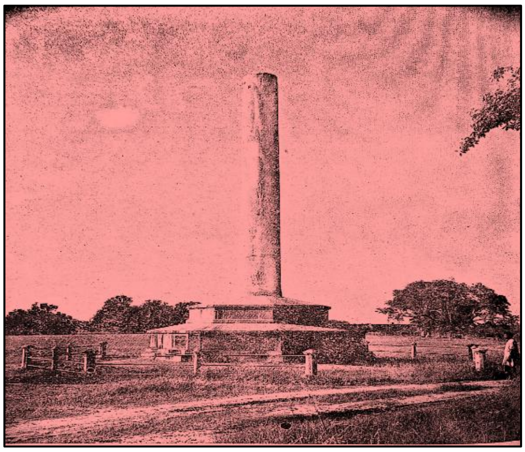

चित्र संख्या 73 एकाश्मक स्तम्भ

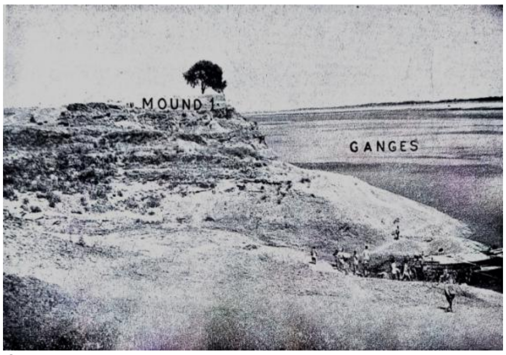

चित्र संख्या 71, टीला–1 (नारायण एवं राय, 1968)

चित्र संख्या 72 टीला संख्या 1 का कटा अनुभाग

इस पुरास्थल पर सर्वप्रथम सर्वेक्षण का काम 1891 ईस्वी में ए0 फ्यूहरर ने किया और प्रहलादपुर को पल्लातपुर (Pallatpur) के नाम से सम्बोधित किया। फ्यूहरर के अनुसार 17वीं शताब्दी में यह पुरास्थल बलुआ पत्थर के एकाश्मक स्तम्भ की खोज के साथ प्रकाश में आया था (चित्र संख्या 73)। यह गुप्त लिपि में अंकित शिशुपाल का अभिलेख है। इसे 1853 ई0 में जेन्स थॉमसन के निर्देश पर वाराणसी लाकर 1854 ई0 में वर्तमान सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय में स्थापित कर दिया गया है (फ्यूहरर, 1891: 234) तत्पश्चात् 1957 ई0 में अवध किशोर नारायण और एफ0आर0 आल्चिन, एस0पी0 लाल, त्रिभुवन नाथ राय, विद्याप्रकाश, पी0सी0 पन्त (नारायण एवं राय, 1968:6; आई0ए0 आर0 1961–62: 34–52) ने सर्वेक्षण का कार्य किया। प्रहलादपुर से प्राप्त कृष्ण–लोहित मृदभाण्ड को दक्षिण भारत से प्राप्त महापाषाणिक मृदभाण्ड के अत्यधिक सन्निकट बताया है।

उत्खनन के परिणामस्वरूप कुल 6.20 मीटर का मोटा जमाव प्राप्त हुआ है। इस सांस्कृतिक जमाव को 7वीं शताब्दी ईसा पूर्व से प्रारम्भिक शताब्दी ईस्वी के मध्य के प्रारम्भिक, मध्य एवं उत्तर चरण (Early, Middle and late phase) में विभाजित

किया गया है। इनके लिए पुनः प्रथम उपकाल 'अ', प्रथम उपकाल 'ब' तथा प्रथम उपकाल 'स' की शब्दावली प्रदान की गयी है अर्थात हम कह सकते है सम्पूर्ण जमाव से प्राप्त अवशेषों में विविधता के कारण तीन भागों में विभाजित किया गया है। जो क्रमशः प्रथम उपकाल 'अ' 'ब' और 'स' है।

i. प्रथम उपकाल 'अ'– प्राक् उत्तरी काली चमकीली मृदभाण्ड संस्कृति
ii. उपकाल 'ब' –उत्तरी काली चमकीली मृदभाण्ड संस्कृति
iii. उपकाल 'स' उत्तरवर्ती उत्तरी काली चमकीली मृदभाण्ड काल या कुषाण काल

प्रथम उपकाल 'अ' या प्रारम्भिक चरण

इस चरण प्राक् उत्तरी कााली चमकीली मृदभाण्ड संस्कृति के नाम से जाना जाता है। इस चरण के सादे और अलंकृत कृष्ण–लेपित मृदभाण्ड, मोटे लाल, मृदभाण्ड और अलंकृत कृष्ण–लोहित मृदभाण्ड, लाल–लेपित मृदभाण्ड प्राप्त होते है और सादे धूसर मृदभाण्ड, जो गढ़न में चित्रित धूसर मृदभाण्ड संस्कृति के समान है भी प्राप्त होते है। इन मृदभाण्डों में कृष्ण–लेपित मृदभाण्डों का प्रतिशत सबसे अधिक है। कृष्ण–लोहित मृदभाण्ड प्रकारों को सफेद तथा काले रंग से अलंकृत (राय, 1983: 42) किया गया है। लाल–लेपित मृदभाण्डों में थालियाँ, कटोरा तथा छोटे घड़े प्रमुख है। इन मृदभाण्डों के अलावा इस काल से धूसर रंग के भी मिले हैं इस प्रकार के पात्रों में बारीदार थालीयाँ प्रमुख हैं।

इस चरण से प्राप्त अन्य सामग्रियों में हड्डी के भेदक, मृण–चक्राभ (ferracotta disc), मृण–शंकु (cone), पात्र–चक्राभ (Pottern disc) लौह मल, लौह बाणाग्र, चाल्सिडोनी का क्रोड, घट प्रकार की मिट्टी, गोमेद तथा कार्नेलियन के मनके, कोयला खण्ड या जली मिट्टी के टुकड़े, मानव अस्थि शवाधन आदि प्राप्त होते है। इस पुरास्थल से हड्डी के बने औजरों में भेदक की प्राप्ति हुई है जो दो तरफी नोकदार और एक तरफी नोकदार दोनों प्रकार के मिले हैं। एक तरफी नोकदार भेदक में हत्थेदार (Tanged) एवं चुलदार (socketed) भेदक प्राप्त हुए है। (नारायण एवं राय 1968:39–41)। इस चरण की तिथि 673 ईसा पूर्व से 500 ईसा पूर्व के मध्य मानी गयी है। इस स्तर से प्रात कोयले से कार्वन 14 तिथि टाटा इन्स्टीट्यूट ऑफ फण्डामेण्टल रिसर्च, मुबई द्वारा 5730 वर्ष प्राप्त की गई है। इसका अर्धजीवन 2715$\pm$500 वर्ष स्वीकार किया गया है जबकि मानव अस्थि को कार्बन 14 तिथि जॉच से अस्वीकृत कर दिया गया था जिससे इसकी तिथि ज्ञात नहीं की जा सकी है (नारायण एवं राय, 1968:14,64)।

प्रथम उपकाल 'ब' (मध्य चरण)

यह चरण उत्तरी काली चमकीली मृदभाण्ड संस्कृति से सम्बन्धित है। इस काल के मृदभाण्ड प्रथम चरण के मृदभाण्ड से परिष्कृत तथा उत्कृष्ट तकनीकी से बनाये गये है। ये पात्र चाक पर निर्मित है। ये पात्र भूरे, रजत, सुनहला, चाकलेटी, हल्का लाल और गाड़े लाल रंग से संजोये गये है। इस चरण के मृदभाण्ड परम्पराओं में कृष्ण लेपित मृदभाण्ड, उत्तरी कृष्ण मार्जित मृदभाण्ड, लाल व लाल लेपित मृदभाण्ड, कृष्ण लोहित मृदभाण्ड, सादा धूसर मृदभाण्ड और लोहित –कृष्ण मृदभाण्ड है। इस काल के प्रमुख पात्र प्रकारों में कटोरे (कोखादार एवं बारीदार) और थालियों के विभिन्न प्रकार है। इस काल से चित्रित मृदभाण्ड नगण्य हो जाते है लेकिन लोहित–कृष्ण मृदभाण्डों के उपर चिपकाकर अलंकरण किये जाने का प्रयास किया गया है।

इस चरण से प्राप्त अन्य सामग्रियों में हड्डी के बने भेदक, मृण–चक्राभ, शकु, पात्र–चक्राभ मिट्टी की गेंद, ताम्र लौह, मृतिका वलय कूप, अर्धबहुमूल्यवान पत्थर, मिट्टी तथा कांच के मनके पशु तथा मानव मृण मूर्तियॉ, पत्थर जड़ित मिट्टी का लोढ़ा, रजत ताँवे के आहत सिक्के प्राप्त हुए है (नारायण एवं राय, 1968ः 38–64)। पात्र–चक्राभ छिद्रित तथा अछिद्रित दोनों प्रकार के मिलते हैं। मानव मृण मूर्तियों में सभी स्त्री–मृण मूर्तियां है। इस चरण की तिथि 500 ईसा पूर्व से 163 ईसा पूर्व के मध्य रखी गयी है (नारायण एवं राय 1968ः 66)।

प्रथम उपकाल 'स' (अन्तिम चरण)

इस चरण को उत्तरवर्ती उत्तरी काली चमकीली मृदभाण्ड संस्कृति के अन्तर्गत रखा जाता है। इस उपकाल में कृष्ण–लोहित मृदभाण्ड पूरी तरह समाप्त हो जाता है। शेष मृदभाण्ड परम्पराओं में भद्दापन बढ़ता जाता है। कृष्ण–लेपित मृदभाण्ड नगण्य रह जाता है तथा उत्तरी कृष्ण मार्जित मृदभाण्ड परम्परा में उतार आता है,ये मोटे बनने लगते हैं। लाल मृदभाण्ड की उपयोगिता ज्यादा हो जाती है। इस चरण के भद्दे, धूसर कटोरे तथा थालियों के अन्दर की तरफ सकेन्द्रीय वृत्त से अलंकरण संजोये गये हैं। इस चरण का विशिष्ट लक्षण प्रकार कड़ाही तथा कोखदार हँाडी बन जाता है। इस चरण से प्राप्त अन्य अवशेषों में हड्डी के बेधक को छोड़कर अन्य सभी अवशेष पूर्ववर्ती चरणों की तरह ही मिले हैं। इस चरण की तिथि 163 ईसा पूर्व से 21 ईसा पूर्व अर्थात ईसा की प्रथम शताब्दी माना गया है (नारायण एवं राय, 1968ः 65–68)।

इस प्रकार यह पुरास्थल 800 ईसा पूर्व से लेकर प्रथम शताब्दी ईस्वी तक गुलजार रहने के बाद अचानक विरान हो जाता है क्यो? इस प्रश्न पर अगर विचार करें तो पुरास्थल के विस्तार, प्राप्त अवशेषों एवं जमाव को देखना पड़ेगा क्योंकि उत्खनन कर्ता द्वारा रिपोर्ट के प्रारम्भ में ही बताया गया है कि पुरास्थल के उत्खनन के परिणामस्वरूप 6.20 मीटर मोटा जमाव प्राप्त हुआ है, इसमें 2.29 मीटर मोटा उपरी जमाव के छोड़कर शेष 3.9 मीटर का सांस्कृतिक जमाव है अर्थात यह कहँा जा सकता है 2.29 मीटर का जमाव केवल बालू और मिट्टी का है जो बाढ की ओर संकेत करता है। यह इसलिए भी सम्भव है क्योकि पुरास्थल के उत्तर की तरफ गंगा नदी से तथा पश्चिम की तरफ 30 मीटर चौड़ा नाले से घिरा हुआ है। इस प्रकार कहॉ जा सकता है कि पुरास्थल का विनाश बाद के कारण से हुआ या यह सम्भावना की जा सकती है बाढ़ की विभिषिका से परेशान होकर लोग यहाँ से स्थानान्तरित हो गये। अब प्रश्न यह उठता है कि लोग स्थानान्तरित होकर कहाँ गये ओर दूसरा प्रश्न यह उठता है अगर कुछ समय के लिए स्थानान्तरित हुए तो फिर वापस क्यों नहीं आये? क्या कोई और कारण इसके पीछे उत्तरदायी है?

इन्हीं प्रश्नों को लेकर मेरे द्वारा इस पुरास्थल की वर्तमान स्थिति जानने की तीव्र उत्कण्ठा हुई क्योंकि यह पुरास्थल इस क्षेत्र की प्राचीनता और महत्व को स्थापित करने का एक मात्र उत्खनित स्थल है और संयोग से यह पुरास्थल मेरे निवासस्थल से लगभग 15 कि0मी0 की दूरी पर भी स्थित है।

पुरास्थल पर जाने के बाद ज्ञात हुआ कि पुरास्थल की वर्तमान स्थिति बहुत कुछ बदल चुकी है। पुरास्थल उत्तर की ओर से गंगा नदी द्वारा लगभग आधा काट दिया गया है तथा पश्चिम की ओर से भी गंगा नदी में गिरने वाले नाले के द्वारा कटाव किया गया है। टीले के तीन तरफ स्थानीय लोगों द्वारा टीले को काट कर खेती का कार्य किया जा

रहा है (चित्र संख्या 74)। जिससे पुरास्थल का मुख्य भाग बहुत कमक्षेत्र में सीमित होकर रह गया है हालाकि स्थानीय लोगों द्वारा बनाये गये खेतों एवं मुडेर पर लगभग 500 x 500 मीटर के परिक्षेत्र में मृदभाण्डों के छोटे–छोटे टुकड़े बहुंत अधिक संख्या में विखरे पड़े है जो इस बात की ओर संकेत करते है कि पुरास्थल बहुत ही विस्तृत क्षेत्र में फैला हुआ था। प्राप्त मृदभाण्डों की अधिकता इस बात की ओर संकेत करती है कि प्राचीनकाल में पुरास्थल मृदभाण्ड बनाने का केद्र रहा होगा तथा तत्कालिन समय में तुलनात्मक रूप अधिक जनसंख्या को घारित करने वाला पुरास्थल रहा होगा।

चित्र संख्या 74 पुरास्थल का वर्तमान दृश्य

चित्र संख्या 75 प्राचीन कुआँ

पुरास्थल आजकल आये दिन विवाद का कारण भी बन गया है क्योंकि वर्तमान समय में पुरास्थल के उपर दो धर्मों को मानने वाले लोगों द्वारा अपने–अपने धर्म से सम्बन्धित प्रतीकों को स्थापित कर अपना होने का दावा करते हैं टीले पर एक तरफ बौद्ध धर्म को मानने वाले तथा दूसरी तरफ शहीद बाबा को मानने वाले अपने प्रतीक बनाये हुए हैं। जिससे टीले की प्राचीन विरासत अपने अस्तित्व को खो रही है।

पुरास्थल पर सर्वेक्षण के क्रम में मदभाण्डों के टुकड़े (चित्र संख्या 77), मृण–चक्राभ, मृदभाण्ड की बनी चक्की टेराकोटा की बनी गेंद का टुटा हुआ भाग, मिट्टी का खिलौना (चित्र संख्या 82), कुआ (चित्र संख्या 75), प्राचीन संरचना एवं पकी ईंटों (चित्र संख्या 76) को अवशेष प्राप्त हुए है। मृदभाण्डों में उत्तरी काली चमकीली मृदभाण्ड परम्परा कृष्ण–लेपित, कृष्ण–लोहित, लाल एवं लाल –लेपित, धूसर और चटाई छाप मृदभाण्ड इत्यादि के टुकडे प्राप्त हुए हैं (चित्र संख्या 78–80)। इन मृदभाण्डों के टुकडों में कृष्ण–लेपित मृदभाण्ड और उत्तरी काली चमकीली मृदभाण्ड के टुकड़े पुरास्थल पर सर्वत्र विस्तृत है (चित्र संख्या 79)। इन पात्रों को विलासिता से सम्बन्धित पात्र के रूप में जाना जाता है क्योंकि मानव के पास इस समय तक धातु के बर्तन उपलबध नहीं थें इसलिए इस तरह के पतली गढ़न और चमकने वाले पात्रों को विलासमय जीवन (luxurious) से जोड़ा जाता है तथा इन पात्रों को किमती/भब्य या शानदार पात्र (luxurious pottory) के रूप में जाना जाता है। इस तरह के पात्र मध्य गंगा मैंदान में 600 ईसा पूर्व से 100 ईसा पूर्व के मध्य अधिकता में मिलते हैं लेकिन बाद के कालों में इनका प्रचलन कम तथा नगणय हो जाता है। इसका एक सम्भावित कारण धातु के बर्तनों का प्रचलन में आना हो सकता है।

चित्र संख्या 76, 77, 78 पकी ईट, पुरास्थल पर विखरे मृद्भाण्ड, मोटे पात्र के अवशेष

चित्र संख्या 79 काले एवं एन0बी0पी0 डब्लू0 पात्र

चित्र संख्या 80 मृण–चक्राभ एवं अन्य

चित्र– 81 टेराकोटा का बाल एवं खिलौना

इस पुरास्थल पर इन भव्यता से सम्बन्धित पात्रों का अधिकता में मिलना वर्तनों के व्यापार और वाणिज्य की ओर संकेत करता है। इस बात की पुष्टि इस बात से भी होती

है कि 1957 में सर्वेक्षण के समय प्रहलादपुर से प्राप्त कृष्ण–लोहित पात्रों को दक्षिण भारत से प्राप्त महापाषाणिक मृदभाण्डों के अत्याधिक सन्निकट बताया गया है (नारायण एवं पन्त 1964–65ः 115–135)। एक स्थानीय बुर्जुग (लगभग 75 वर्ष) व्यक्ति जो कि प्राचीन इतिहास में स्नातक थे उनसे बात करने पर उनके द्वारा भी इसे बर्तन व्यापार केन्द्र होने की बात को ही बताया गया कि व्यापारी प्राचीन काल में यहाँ से बर्तन लेकर व्यापार करने के लिए जाते थे इसलिये ही यहाँ पर पात्रों के टुकड़े अधिकता में मिलते हैं। अगर इस तथ्य को मान लिया जाय तो ये बात और स्पष्ट हो जाती है कि यहाँ मानव तब तक निवास किया, जब तक बर्तन का व्यापर होता था लेकिन बाद के कालों में जब धातु के बर्तन प्रचलन में आ गये, तब इन भव्यता या विलासिता से सम्बन्धित इन बर्तनों का व्यापार कम हो गया और मानव को जीविका चलाने के लिए संकट उत्पन्न हो गया, जिससे तत्कालिन मानव इस पुरास्थल को छोड़कर अन्यत्र चले गये हो, जिससे यह कहाँ जा सकता है कि बाढ के अलावा, आर्थिक संकट भी यहाँ स्थानान्तरण का एक कारण हो सकता है।

नवीन सर्वेक्षित पुरास्थल एवं कला स्थापत्य अवशेष

इस पुरास्थल के पांच कि0मी0 के क्षेत्र में तीन और पुंरास्थल सर्वेक्षित किये गये, जिनका सम्बन्ध किसी न किसी रूप में इस पुरास्थल से था। ये पुरास्थल मनीपट्टी चट्टी, करजरा कोट एवं प्रह्लादपुर शिवाला है, जो इस क्षेत्र के बाद के इतिहास एवं कला वैभव को प्रकाशित करते हैं। प्रह्लादपुर पुरास्थल का इतिहास प्रथम शताब्दी ईसा पूर्व तक जब समाप्त हो जाता तो एकाश्मक स्तम्भ पर गुप्तकालीन बाह्मी लिपि में लेख कैसे लिखा गया? और स्तम्भ किसने लगवाया? इससे एक बात तो साफ हो जाती है कि स्तम्भ जिसने भी लगवाया और लेख लिखवाया उसका सम्बनध निश्चित रूप से गुप्तकाल या उसके बाद का होगा। इसकी पुष्टि प्रहलादपुर शिवाला स्थल से मन्दिर के आधार भाग में लगी ईटों से होती है जो कि गुप्तकालीन ईटों के समान प्रतीत होती है। इन सब तर्को के आधार पर कहाँ जा सकता है इन क्षेत्रों में और अधिक गहन सर्वेक्षण अध्ययन की आवश्यकता है। जिससे की इस क्षेत्र के इतिहास पर और अधिक प्रकाश पड़ सके।

'प्रहलादपुर शिवाला' (25^0 26' 41'' उत्तरी अक्षांस, 83' 27' 03'' पूर्वी देशान्तर)

प्रह्लादपुर शिवाला पुरास्थल, प्रहलादपुर (आई. ए. आर. 1961ः 34–52) पुरास्थल से लगभग 800 मीटर दक्षिण पूर्व की ओर उत्तरप्रदेश के चन्दौली जिले में स्थित है। यह पुरास्थल वाराणसी से 55 कि0मी0 चन्दौली जिला मुख्यालय से 30 कि0मी0 और धानापुर पुलिस थाने से 12 कि0मी0 की दूरी पर है। गंगा नदी पुरास्थल के बॉयी ओर 500 मीटर की दूरी पर प्रवाहित होती है। पुरास्थल का विस्तार अपने मूल स्वरूप में लगभग 200 x 200 मीटर के वृहद परिक्षेत्र में था लेकिन मार्ग बनाने कृषि कार्य करने आवास बनाने तथा पशुओं को बाधने के कारण वर्तमान समय में केवल 100 x 50 मीटर का ही टीले का भाग बचा हुआ है। टीले की ऊँचाई भूमि सतह से लगभग 20 फीट है (चित्र संख्याः 1) ।

चित्र संख्याः 1 पुरास्थल का विहंगम दृश्य

चित्र संख्या:2 प्राचीन मन्दिर

पुरास्थल पर सर्वक्षण के क्रम एक प्राचीन कालीन मन्दिर, मृदभाण्ड के टुकड़े तथा पकी मिट्टी के ईटों का अवशेष प्राप्त हुआ है। सर्वेक्षण में जिस मन्दिर का अवशेष प्राप्त हुआ है वह शिव का मन्दिर है (चित्र संख्या:2) तथा मन्दिर का निर्माण सर्वप्रथम ईटों से किया गया है और बाद के कालों में पाषाण के द्वारा पुर्ननिर्माण के स्पष्ट साक्ष्य दिखाई पड़ता है क्योंकि मन्दिर इतना जर्जर हो चुका है(चित्र संख्या:7) कि दीवाल एवं गुम्बद में लगी पाषाण की पट्टी उखड़ चुकी है जिससे ईटों से बनी संरचना स्पष्ट दिखाई पड़ती है (चित्र संख्या:3)। मन्दिर संरचना के विकास की दृष्टि से देखा जाय तो यह मन्दिर द्वितीय अवस्था का प्रतीत होता है क्योंकि मंदिर में गर्भगृह का भाग एवं आगे छोटा सा मण्डप बना हुआ है और गर्भ गृह के ऊपर एक छोटा सा गुम्बद बना हुआ है तथा उसे पत्थर की पट्टी के माध्यम से चौकोर रूप प्रदान किया गया है। मन्दिर पूरी तरह से वृक्षों से ढका हुआ है दूर से मन्दिर का केवल कुछ ही भाग दिखाई पड़ता है मन्दिर के गर्भगृह में कोई भी मूर्ति वर्तमान समय में नहीं है (चित्र संख्या–6) लेकिन मन्दिर के द्वार के बाहर एक जर्जर नन्दी की प्रतिमा लगी हुई है तथा ललाट के ऊपर गणेश जी की छोटी सी प्रतिमा लगी हुई है जिससे मन्दिर की पहचान शिवमन्दिर के रूप में की गयी है इसलिए पुरास्थल को प्रहलादपुर ''शिवाला'' अर्थात ''शिव का आलय'' नाम से जाना जाता है।

मन्दिर के द्वारा के ललाट के ऊपर गणेश प्रतिमा के दॉयी ओर से देवनागरी लिपि में 10 पंक्तियों का लेख लिखा हुआ (चित्र संख्या–4)। इसमें भी महादेव शब्द आया हुआ। लेख के कुछ अक्षर स्पष्ट नहीं हो रहे है लेख के आठवी पंक्ति में प्रहलादपुर शब्द आया हुआ तथा दशवी पक्ति में सन् लिखा हुआ लेकिन स्पष्ट नहीं हो पाया है। मन्दिर के द्वार का भाग अलंकृत स्तम्भों के माध्यम से बना हुआ है। मन्दिर के द्वार में लगे स्तम्भ के निचले भाग पर दोनों तरफ एक–एक द्वारपालों की प्रतिमा लगी हुई है (चित्र संख्या–5)।

मन्दिर का आधार भाग और दिवाल का भाग भी अलंकृत पट्टियों के प्रयोग के द्वारा बना हुआ है। मन्दिर का निर्माण बलुए पत्थर की बनी अलंकृत पट्टियों और स्तम्भों के प्रयोग से हुआ है। वाराणसी परिक्षेत्र में जब गहडवालों का शासन था तो उनके समय में बहुत से मन्दिरों का निर्माण करवाया गया तो हो सकता कि इस मन्दिर का निर्माण भी गहड़वालों के समय में किया गया हो लेकिन मन्दिर के आधार भाग में लगी ईंटे और भी

प्राचीन प्रतीत होती है (चित्र संख्या:8)। इन ईटों की बनावट प्रहलादपुर (नरायण एवं राय, 1968: 10–11) पुरास्थल से प्राप्त ईंटों के समान है हांलाकि प्रह्लादपुर से प्राप्त ईटों का प्रयोग किस काल में प्रारम्भ हुआ, यह स्पष्ट नहीं हैं। राजघाट पुरास्थल से भी इस तरह की ईटें तृतीय एवं चतुर्थ काल से मिलती है (नरायण एवं राय, 1976, 28–31), जिसके आधार पर यहाँ से प्राप्त ईटों को भी 200 ईस्वी से 500 ईस्वी के मध्य का माना जा सकता है।

चित्र संख्या –4 गणेश प्रतिमा एवं लेख

चित्र संख्या –5 टुटी हुई नन्दी की प्रतिमा एवं द्वारपाल

चित्र संख्या–3 मन्दिर का पिछला भाग

चित्र संख्या–6 गर्भ गृह

यहाँ से प्राप्त मृदभाण्डों के टुकड़ों में लाल मृदभाण्ड, लाल–लेपित मृदभाण्ड और काले मृदभाण्ड है। इन मृदभाण्डों के टुकड़ों के आधार पर कहाँ जा सकता है कि यहाँ का मनाव हॉडी, तश्तरी और कटोरा इत्यादि पात्रों का प्रयोग करता था। इस तरह के पात्रों के अवशेष नजदीकी पुरास्थल प्रह्लादपुर (नरायण एव राय, 1968:66–67) के प्रथम 'ब' और 'स' उपकाल से प्राप्त होते हैं जिसके आधार पर कहाँ जा सकता है इस पुरास्थल पर भी मानव का पर्दापण लगभग 300 ई0 पू0 में हो चुका था और जब प्रहलादपुर पूरास्थल उजाड़ हो रहा था तो धीरे–धीरे प्रहलादपुर शिवाला पूरास्थल पर मानव का रहन–सहन बढ़ता गया।

चित्र संख्या–7 मन्दिर के टुटे अवशेष चित्र संख्या–8 आधार भाग में प्रयुक्त ईंटें

यहां से प्राप्त मंदिर स्थापत्य अवशेष की बनावट एवं कलात्मकता वाराणसी परिक्षेत्र में गहढ़वाल काल में बनाए जा रहे मंदिरों के समान प्रतीत होती है। मंदिर के द्वार के ऊपर एक 10 पंक्तियों का लेख भी प्राप्त हुआ है जिसमें सन् का भी उल्लेख है जिसमें 12 स्पष्ट हो पा रहा है, लेकिन आगे का अक्षर स्पष्ट नहीं हो पा रहा है। दो स्पष्ट अक्षरों के आधार पर इस मंदिर के निर्माण की तिथि 12 वीं शताब्दी से तेरहवीं शताब्दी ईसवी के मध्य रखी जा सकती है। इस लेख में बनारस नाम स्पष्ट उल्लिखित है, जिसके आधार पर यह संभावना की जा सकती है कि यह क्षेत्र बनारस के शासक के द्वारा शासित रहा होगा। इन सभी विवरणों के आधार पर इस पुरास्थल की ऐतिहासिक विरासत को मोटे तौर पर 300 ईसा पूर्व से तेरहवीं शताब्दी ईस्वी के मध्य रखा जा सकता है। वर्तमान समय में भी इस पूरा स्थल के समीप मानवीय निवास हो रहा है, जिससे यह पूरा स्थल आज भी गुलजार है।

''मनीपट्टी चट्टी'' (25^{0} 25' 23'' उत्तरी अक्षांश, 83^{0} 26' 52'' पूर्वी देशान्तर)

यह पुरास्थल उत्तर प्रदेश के चन्दौली जनपद में प्रहलादपुर पुरास्थल से दायी ओर 2 कि0मी0 की दूरी पर है। पुरास्थल वाराणसी से 60, चन्दौली जिला मुख्यालय से 40 कि0मी0 तथा गाजीपुर की जमानियाँ तहसील से लगभग 11 कि0मी0 की दूरी पर स्थित है। इस पुरास्थल के बाँयी ओर गंगा नदी लगभग दो कि0मी0 दूरी पर प्रवाहित होती है। यह पुरास्थल धानापुर से जमानियाँ को जाने वाली मुख्य सड़क से गुरैनी घाट को जाने वाली सड़क के बॉयी ओर तिराहे पर ही स्थित है। टीले का विस्तार लगभग 150 X 150 मीटर के वृहद क्षेत्र में है।

चित्र संख्याः 54 पुरास्थल का दृश्य चित्र संख्या 55 प्राप्त मृद्भाण्डीय अवशेष

टीले के उपरी भाग पर वर्तमान समय का माता जी एक मन्दिर बना है। जिसमें ग्रामीणों द्वारा पुजा–अर्चना का कार्य किया जाता है। इस पुरास्थल को भी लोगों द्वारा काट दिया गया है तथा कृषि–कार्य के लिये प्रयोग किया जाता है। टीले की वर्तमान उँचाई लगभग 10 फीट है जो प्रारम्भिक ऊचाई की आँधी से भी कम है। टीले के उपर मन्दिर बने होने की वजह से पुरास्थल का कुछ भाग बचा हुआ है जो अध्ययन के लिए आधार प्रदान करता है।

इस पुरास्थल पर सर्वेक्षण के क्रम में सतह पर बिखरे हुए मृदभाण्ड के टुकड़े प्राप्त हुए हैं मृदभाण्डों में लाल, लाल–लेपित और कृष्ण–लोहित मृदभाण्डों के टुकड़े प्रमुखता से मिले है (चित्र 55)। काले रंग के मृदभाण्ड के भी कुछ टुकड़े मिले है जो मोटी गढ़न के बने हुए है। इन मृदभाण्डों के टुकड़ों के आधार पर कहाँ जा सकता है कि यहाँ निवास करने वाले लोगों के द्वारा घड़ा, कटोरा, हाँडी कोखदार हाँडी इत्यादि का प्रयोग किया जाता रहा होगा। इस तरह के लाल और लाल लेपित मृदभाण्ड समीपवर्ती प्रहलादपुर पुरास्थल के प्रथम 'अ' और 'ब' काल से मिले है तथा प्रथम उपकाल –स' से लाल लेपित मृदभाण्ड कम मिले है लेकिन लाल मृदभाण्ड सादे किस्म के अधिकतम संख्या में प्राप्त होते है (नरायण एवं राय, 1968ः 65–70)। इस समानता के कारण ऐसा माना जा सकता है कि यह पुरास्थल प्रहलादपुर का एक छोटा सा पड़ाव रहा होगा या ऐसा भी हो सकता है कि जनसंख्या बढ़ने तथा आवागमन में सुविधा के लिए मानव द्वारा इस स्थल पर निवास किया जाता रहा हो। एक सम्भावना यह भी की जा सकती है कि प्रहलादपुर पुरास्थल गंगा नदी के विल्कुल किनारे पर बसा हुआ और जब कभी बाढ़ की स्थिति होती हो तो यहाँ के मानव द्वारा इस पुरास्थल पर आकर कुछ समय के लिए निवास करते रहे हो क्योंकि गंगा नदी से मिलने वाला एक नाला प्रहलादपुर पुरास्थल के दांयी ओर से तथा इस पुरास्थल के बांयी ओर लगभग एक किमी0 की दूरी पर प्रवाहित होता है।

इस पुरास्थल से मृदभाण्डों के अलावा टेराकोटा से बनी एक गेंद का टुटा हुआ भाग भी सर्वेक्षण से प्राप्त हुआ है (चित्र संख्या 57)। इस तरह की गेंद का साक्ष्य समीपवर्ती पुरास्थल प्रहलादपुर के प्रथम 'ब' और प्रथम 'स' काल से भी मिला है (नरायण एवं राय, 1968ः 61, प्लेट नं0–XXV)।

चित्र संख्या 57 टुटी गेंद

चित्रः 2 करजरा कोट पुरास्थल का विहंगम दृश्य

इन प्राप्त अवशेषों के समीपवर्ती पुरास्थल से प्राप्त अवशेषों की समानता के आधार पर इस पुरास्थल की तिथि 300 ई0 पूर्व से प्रथम शती ईस्वी के मध्य रखी जा सकती है।

'करजरा कोट' (अक्षांश 25^0 24' 39'' उत्तरी देशान्तर, 83^0 26' 39'' पूर्वी)

करजरा कोट पुरास्थल करजरा गांव के दक्षिण–पश्चिम की ओर उत्तरपद्रेश के चन्दौली जनपद के बरहनी ब्लाक में स्थित है। करजरा पुरास्थल वाराणसी से 60 कि0मी0 तथा चन्दौली जिला मुख्यालय से 40 कि0मी0 की दूरी पर कमालपुर से मउजी, एवती मुख्य सड़क से बरहनी से करजरा को जाने वाली सड़क के दॉयी ओर स्थित है। प्रहलादपुर पुरास्थल, इस पुरास्थल के बॉयी ओर पॉच कि0मी0 की दूरी पर है। पुरास्थल पर सर्वेक्षण के क्रम में पकी मिट्टी से बना ईंट का टुकड़ा टेराकोटा से बनी वस्तुएँ तथा मृदभाण्ड के टुकड़े प्राप्त हुए है।

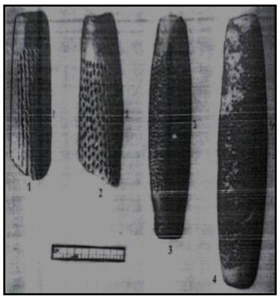

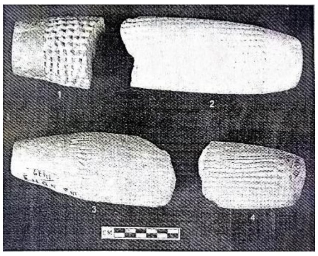

चित्र–7 करजराःटेराकोटा का लोढ़ा चित्र 5 चिरांदःटेराकोटा का लोढ़ा चित्र 2 खैराडीहःटेराकोटा का लोढ़ा

पुरास्थल से प्राप्त टेराकोटा की कलात्मक वस्तु के रूप में एक लोढ़ा का आधा भाग मिला है, जो बीच से टुटा हुआ है। लोढा का किनारा पतला है एवं बीच में उपरी भाग पर छोटे–छोटे खांचे बने हुए हैं तथा उसके उपर लाल रंग की स्लीप लगी हुई है (चित्र संख्या 7)। इस लोढ़े के अन्तिम छोर पर कुटने तथा बीच वाले भाग पर रगड़ने या

पीसने के स्पष्ट साक्ष्य दिखाई पड़ते हैं। बीच भाग में बने खाँचे पीसने एवं रगड़ने के कारण मिट चुका है। यह लोढ़े का भाग पुरास्थल के पश्चिम की तरफ ग्रामीणों द्वारा टीला को काटने के कारण बने अनुभाग से मिला है, जो टीला की उपरी सतह से दो फीट नीचे अनुभाग में फँसा हुआ था। इसी तरह के लोढे की प्राप्ति खैराडीह (सिंह एवं राय, 2014ः प्लेट नं0– LVIII) के द्वितीय एवं तृतीय स्तर से भी हुई है (सिंह एवं राय, 2014ः 115) (चित्र संख्या 3)। पक्काकोट पुरास्थल के तृतीय एवं चतुर्थ काल से भी इसी तरह के लोढ़ो की प्राप्ति हुई है (दुबे व अन्य, 2012ः प्लेट नं0–XLVI; 188-190) (चित्र संख्या 4)। इसी तरह का एक और साक्ष्य चिरांद पुरास्थल के तृतीय एवं चतुर्थ काल से भी मिला है यहाँ के भी तृतीय एवं चतुर्थ काल का भी सम्बन्ध क्रमशः उत्तरी काली चमकीली मृदभाण्ड परम्परा काल से तथा कुषाण काल से है (वर्मा, 2007ः 193, प्लेट नं–XXXVIII)। इन सब साक्ष्यों के आधार पर स्पष्टतः कहॉ जा सकता है कि मध्य गंगा मैंदान में पाषाण की अनुपलब्धता के कारण मानव द्वारा टेराकोटा से बने लोढों का प्रयोग किया जाना आम हो गया था हालांकि इस पुरास्थल के नजदीकी पुरास्थल प्रहलादपुर से पाषाण की बनी कुछ वस्तुएँ प्राप्त की गयी है (नरायण एवं राय, 1968 : 63) लेकिन टेराकोटा से बने लोढ़ों का भी प्रयोग किया जा रहा था। करजरा पुरास्थल के कटे अनुभाग के जिस ऊँचाई से इन टेराकोटा से बने लोढ़े की प्राप्ति हुई है उसके नीचे भी लगभग तीन फीट का जमाव है (चित्र संख्या 6) जिसे यदि 100 वर्ष भी पुराना माना जाय तो इस पुरास्थल की तिथि 400 ई0 पू0 के लगभग मानी जा सकती है।

उपर्युक्त पुरास्थलों के विवरण के आधार पर कहाँ जा सकता कि चन्दौली जिले के गंगेटिक क्षेत्र में कुषाण काल के लगभग बहुत सी बस्तियाँ बस चुकी थी जो चन्दौली जिले के पुरातात्विक महत्व को स्थापित करने का कार्य करती है। इस सर्वेक्षण के माध्यम से प्रहलादपुर से सम्बन्धित तीन और पुरास्थल मन्नी पट्टी चट्टी, करजरा कोट और प्रहलादपुर शिवाला प्रकाश में आये है जो इस बड़े आवासीय स्थल को सहयोग प्रदान करते थे तथा बाद के इतिहास को भी संयोजित किये हुए है। इसी तरह बैराठ पुरास्थल की तरह दुर्गीकृत पुरास्थल केशवपुर, खण्डवारी कोट और भगवती माई (धरहरा) कोट है जो चन्दौली जिले के संरचनात्मक इतिहास को उद्घाटित करने का काम करते है। अन्ततः यह कहा जा सकता है कि यदि इन पुरास्थलों पर उत्खनन कार्य किया जाय तो वस्तुस्थिति स्पष्ट हो सकती है और प्राचीन भारतीय इतिहास संस्कृति एवं पुरातत्व, मध्य गंगा मैदान के पुरातत्व, दुर्गीकृत पुरास्थल के इतिहास तथा चन्दौली जिले के इतिहास में एक नया अध्याय जुड़ जायेगा।

सन्दर्भ ग्रन्थ–

1. *इण्डियन आर्कियोलाजीः ए रिव्यू*, 1962–63।

2. कनिंघम, ए0, 1880 *'ए रिपोर्ट आफ् टुर्स इन गगेटिक प्रोविन्सेज फ्राम बाँदा टू बिहार इन 1875–76 एण्ड 1877–78'* वाल्यूम XI, कलकत्ता।

3. कार्लाइल, ए0 सी0 एल0, *1885 रिपोर्ट ऑफ टुर्स इन गोरखपुर, सारण एण्ड गाजीपुर इन 1977–80*, कलकत्ता।

4. दुबे, सीताराम, अशोक कुमार सिंह, एवं गौतम कुमार लामा, 2012, *पक्काकोटः सम न्यू आर्कियोलॉजिकल डाइमेंशन ऑफ मिड–गंगा प्लेन,* रिशी पब्लिकेशन, देलही।

5. नरायन, ए0के0 एवं टी0एन0 राय, 1968, *द एक्सकेवेशन एट प्रहलादपुर,* काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी।

6. नरायन, ए0के0 एवं टी0एन0 राय, 1976, *एक्सकैवेशन एट राजघाट,* ए0आई0एच0सी0 एण्ड आर्कियोलॉजी विभाग, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी।

7. वर्मा, बी0एस0 2007, *चिरांद एक्सवैवेशन रिपोर्ट,* डायरेक्टोरेट ऑफ आर्कियोलॉजी, गर्वमेन्ट ऑफ बिहार, पटना।

8. सिंह, पुरुषोत्तम एवं अशोक कुमार सिंह 2004, *द आर्कियोलॉजी ऑफ मिडल गंगा प्लेन, न्यू पर्सपेक्टीव्स* (एक्सकैवेशन एट अगियाबीर), आर्यन बुक इण्टर नेशनल : नई दिल्ली।

9. पाल, जे0एन0, 1986, *आर्कियोलाजी ऑफ साउर्दन उत्तरप्रदेश,* इलाहाबाद।

10. तिवारी, राकेश 1997–98 ''इन क्वेस्ट ऑफ आयरन एज साइट इन कर्मनाशा वैली'' '*प्राग्धारा* 'नं08, लखनऊ।

11. सिंह, पी0, आर0 तिवारी एण्ड आर.एन0सिंह, 1999–2000 ''एक्स्प्लोरेशन इन चन्दौली डिस्ट्रिक्ट (यू0पी0)'' '*प्राग्धारा*' न0 10, लखनऊ, उत्तर प्रदेश।

12. फुहरर, ए0, 1981 *द मानुमेण्टेल एन्टीक्वीटिज एण्ड इन्सक्रीप्सन्स इन द नार्थ वेस्ट प्रोविन्सेज एण्ड अवध,* नई दिल्ली, आर्कियोलाजिकल सर्वे ऑफ इंण्डिया।

13. राय, टी0 एन0, 1983, *द गंगेज सिविलाइजेशन,* रामानन्द विद्याभवनः नई दिल्ली।

Copyright © 2026 Author(s). Published by Siri Research Foundation. This is an open access article distributed under the Creative Commons Attribution International License (CC BY 4.0).